[2018] 3 एससीआर 640

भारत संघ और अन्य

बनाम

चमन राणा

(सिविल अपील संख्या 2763 वर्ष 2018)

मार्च 12, 2018

[अरुण मिश्र व नवीन सिन्हा, माननीय न्यायमूर्तिगण]

सेवा विधि: पदोन्नति - निवर्तन की तिथि से यानी जिस तिथि से उनके कनिष्ठ को पदोन्नत किया गया था, उस तिथि से पदोन्नति के लिए पूर्वव्यापी विचार के लिए विलंबित दावा - बार-बार अभ्यावेदन - न्यायालय से संपर्क करने में देरी - माना जाता है: सेवा मामलों में, विशेष रूप से पदोन्नति के संबंध में, हमेशा एक तात्कालिकता होती है - पीड़ित को जल्द से जल्द न्यायालय से संपर्क करना चाहिए, या उसके बाद उचित समय के भीतर क्योंकि इस बीच तीसरे पक्ष के अधिकार उन लोगों को प्राप्त होते हैं जो बाद में हैं। पदोन्नति - राहत प्रदान करने के लिए न्यायालय से संपर्क करने में देरी के लिए केवल बार-बार अभ्यावेदन योजित करना पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं हो सकता है - 17 से 20 वर्षों से अधिक समय बीतने पर उत्तरदाताओं की पूर्वव्यापी पदोन्नति पर विचार करने का कोई भी निर्देश, सरकार के लिए वित्तीय निहितार्थ के अलावा गंभीर प्रशासनिक अराजकता पैदा करेगा- दावा पोषणीय नहीं- देरी/अति विलंब

अपीलों को स्वीकार करते हुए, न्यायालय द्वारा

निर्धारित: 1. कार्रवाई का कारण पहली बार उत्तरदाताओं को प्रारंभिक निवर्तन की तिथि पर और फिर उस तिथि को उठाया गया जब उनके प्रतिनिधित्व की अस्वीकृति के बारे में उन्हें सूचित किया गया था, या उसके बाद उचित समय के भीतर। पीड़ित को जल्द से जल्द या उसके बाद उचित समय के भीतर न्यायालय से संपर्क करना चाहिए क्योंकि इस बीच तीसरे पक्ष के अधिकार उन लोगों को प्राप्त होते हैं जिन्हें बाद में पदोन्नत किया जाता है। ऐसे व्यक्ति पदोन्नति पद पर काम करना जारी रखते हैं, वरिष्ठता के संबंध में सेवा में उन्हें उपलब्ध सुरक्षा के अपने विश्वास में डूबे हुए हैं। इसके साथ किसी भी विलंब से हस्तक्षेप से उन लोगों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना तय है जिन्हें पहले से ही पदोन्नत किया गया है और सेवा में उनका मनोबल भी प्रभावित होता है। इसके अतिरिक्त, लंबे अंतराल बाद पूर्वव्यापी प्रभाव से पदोन्नति के लिए दूसरों पर विचार करने के लिए देर से दिए गए किसी भी निर्देश का सरकार पर वित्तीय बोझ के अलावा गंभीर प्रशासनिक प्रभाव पड़ना तय है, जो पदोन्नति के ऐसे आदेशों का पालन करेगा। [पैरा 9]

पी.एस. सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य

(1975) 1 एससीसी 152: [1975] 2 एससीआर 356 पर भरोसा किया गया।

2. राहत प्रदान करने के लिए न्यायालय से संपर्क करने में देरी के लिए केवल बार-बार अभ्यावेदन दाखिल करना पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं हो सकता है। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, 17 से 20 वर्षों से अधिक समय बीतने के बाद प्रतिवादियों की पूर्वव्यापी पदोन्नति पर विचार करने का कोई भी निर्देश, वास्तव में सेवा में सुनामी लाएगा, जिसके परिणामस्वरूप सरकार के लिए वित्तीय निहितार्थ के अलावा प्रशासनिक अराजकता पैदा होगी। [पैरा 11, 17]

भारत संघ बनाम एम.के. सरकार **(2010) 2 एससीसी 59: [2009] 16 एससीआर 249;** *भारत संघ और एक अन्य बनाम मेजर बहादुर सिंह* **(2006) (1) एससीसी 368: [2005] 5 अनुपूरक एससीआर 385;** *उत्तरांचल राज्य बनाम शिव चरण सिंह भंडारी* **(2013) 12 एससीसी 179: [2013] 9 एससीआर 609;** *सी जैकब बनाम निदेशक भूविज्ञान और खनन* **(2008) 10 एससीसी 115: [2008] 14 एससीआर 634 - पर भरोसा किया।**

गांधीनगर मोटर ट्रांसपोर्ट सोसाइटी बनाम गांधीनगर मोटर ट्रांसपोर्ट सोसाइटी स्टेट ऑफ बॉम्बे **एआईआर 1954 बॉम्बे 202 को मंजूरी दी गई।**

सुखदेव सिंह बनाम भारत संघ और अन्य। (2013) 9 एससीसी 566: [2013] 5 एससीआर 1004; देव दत्त बनाम भारत संघ और अन्य, (2008) 8 एससीसी 725: [2008] 8 एससीआर 174 - प्रतिष्ठित।

<u>वाद विधि संदर्भ</u>

[2013] 5 एससीआर 1004	**प्रतिष्ठित**	**पैरा 3**
[2008] 8 एससीआर 174	**प्रतिष्ठित**	**पैरा 3**
[1975] 2 एससीआर 356	**निर्भर**	**पैरा 10**
एआईआर 1954 बॉम्बे 202	**स्वीकृत**	**पैरा 11**
[2009] 16 एससीआर 249	**निर्भर**	**पैरा 12**
एससीआर 385	**निर्भर**	**पैरा 14**
[2013] 9 एससीआर 609	**निर्भर**	**पैरा 15**
[2008] 14 एससीआर 634	**निर्भर**	**पैरा 16**

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 2763 वर्ष 2018

सीडब्ल्यूपी संख्या 20322 वर्ष 2018 में चंडीगढ़ में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के दिनांक 05.05.2017 के निर्णय और आदेश से

के साथ

सिविल अपील संख्या 2764 वर्ष 2018

अपीलकर्ता के लिए संजय कुमार पाठक, गिरीश चौधरी (बी.वी. बलराम दास के लिए) अधिवक्तागण।

उत्तरदाताओं के लिए राजीव शर्मा, दीपक गोयल, अधिवक्तागण।

न्यायालय का निर्णय माननीय न्यायमूर्ति, नवीन सिन्हा द्वारा दिया गया था।

1. अनुमति स्वीकृत।

2. ये दोनों अपीलें 05.05.2017 के एक सामान्य आदेश से उत्पन्न होती हैं, जिसमें सीमा सुरक्षा बल (बीएसएफ) में प्रतिवादियों को क्रमशः सेकंड-इन-कमांड और कमांडेंट के पद पर पदोन्नति के लिए पूर्वव्यापी विचार हेतु निर्देशित था, जिस तिथि से उनके कनिष्ठों को पदोन्नत किया गया था, साथ ही सभी परिणामी लाभों के साथ।

3. दो रिट याचिकाओं में प्रतिवादियों को क्रमशः वर्ष 1996 और 2000 में हटा दिया गया था। बाद में इन दोनों को क्रमश 28-11-1997 और 16-06-2003 को सेकंड-इन-कमांड और कमांडेंट के रूप में पदोन्नत किया गया। इसके बाद, दोनों ने निवर्तन की तिथि से पदोन्नति के लिए कई अभ्यावेदन प्रस्तुत किए। अभ्यावेदनों को अस्वीकार करने के आदेश, कारणों के साथ, उन्हें एक से अधिक बार विधिवत सूचित किए गए थे। सुखदेव सिंह मामले में फैसला सुनाए जाने के बाद। भारत संघ और अन्य, (2013) 9 एससीसी 566 देव दत्त बनाम भारत संघ और अन्य, (2008) 8 एससीसी 725, उनके द्वारा 25.09.2016 को अलग-अलग रिट याचिकाएं योजित की गई थीं। सामान्य तर्क यह था कि संबंधित वर्षों के लिए उनकी वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट (एसीआर) में 'अच्छा' प्रविष्टि 'बहुत अच्छा' के बेंचमार्क को देखते हुए एक प्रतिकूल टिप्पणी थी। चूंकि प्रतिकूल प्रविष्टि के बारे में उन्हें सूचित नहीं किया गया था, इसलिए इस पर विचार नहीं किया जा सका, जिससे निवर्तन की तिथि से पदोन्नति के लिए पुनर्विचार की आवश्यकता थी।

4. अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि प्रतिवादियों के दावे बहुत देर से और बासी थे। रिट याचिकाओं को देरी और अति विलंब के आधार पर निरस्त कर दिया जाना चाहिए था। प्रति शपथपत्र में विशिष्ट आपत्ति जताई गई थी, जिसमें उत्तरदाताओं को पहले पदोन्नत किए गए लोगों पर पड़ने वाले व्यापक प्रभाव भी शामिल थे, और जिससे प्रशासनिक अराजकता पैदा होगी। किसी मामले के तथ्यों को दरकिनार करते हुए इस तरह के देर से किए गए दावों पर विचार करने के लिए केवल अभ्यावेदन योजित करना या उसके बाद का निर्णय देना पर्याप्त औचित्य नहीं हो सकता है। उच्च न्यायालय को पूर्वव्यापी प्रभाव से उनकी उम्मीदवारी पर विचार करने का निर्देश नहीं देना चाहिए था।

5. उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि इस न्यायालय द्वारा विधि के स्थापन को हमेशा पूर्वव्यापी प्रभाव दिया जाना चाहिए, जब तक कि इसे विशेष रूप से भावी नहीं बनाया जाता है। मामले के तथ्यों में ग्रेडिंग 'अच्छी' थी क्योंकि पदोन्नति के लिए बेंचमार्क

'बहुत अच्छा' था। सुखदेव सिंह (उक्त) में पुष्टि की गई देव दत्त (उक्त) में निर्धारित विधि के मद्देनजर, अपीलकर्ताओं के लिए यह अनिवार्य था कि वे प्रतिवादियों को इस तरह की प्रतिकूल टिप्पणियों के बारे में सूचित करें। इस तरह के संचार के अभाव में, इन टिप्पणियों को पदोन्नति से इनकार करने के रूप में नहीं माना जा सकता था। प्रतिवादी वास्तव में और प्रामाणिक रूप से अधिकारियों के समक्ष अपनी शिकायतों का पीछा कर रहे थे, इस उम्मीद में कि वे कारण देखेंगे, और जब उन्हें एहसास हुआ कि अन्यथा राहत नहीं मिलेगी, तो उन्होंने अंततः उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।

6. हमने पक्षकारों की ओर से प्रस्तुतियों पर विचार किया है। विचार के लिए एकमात्र प्रश्न यह है कि वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में प्रतिवादियों के लिए ***देव दत्त*** (उक्त) में घोषित और ***सुखदेव सिंह*** (उक्त) में पुष्टि की गई विधि की प्रयोज्यता क्या है।

7. सीमा सुरक्षा बल (वरिष्ठता, पदोन्नति और अधिकारियों की अधिवर्षिता) नियमावली, 1978 के अंतर्गत विचाराधीन पदों पर पदोन्नति के लिए मानदंड, जैसा कि अर्धसैनिक पदोन्नति डीओ के दिनांक 25.11.1988 के पत्र में निर्धारित किया गया था, को 08.05.1990 को 'अच्छा' से 'बहुत अच्छा' में संशोधित किया गया था। प्रतिवादी चमन राणा, एक डिप्टी कमांडेंट, को 13.09.1996 को आयोजित विभागीय पदोन्नति समिति (डीपीसी) की बैठक में सेकंड-इन-कमांड के पद पर पदोन्नति के लिए विचार किया गया था, लेकिन दिनांक 08.05.1990 के डीओ पत्र में निर्धारित मानदंडों के मद्देनजर ग्रेड नहीं बना सके। प्रतिवादी ने 20.02.1997 को अपने निवर्तन के सापेक्ष प्रतिनिधित्व किया। उन्हें दिनांक 25-03-1997 को कारणों सहित अस्वीकृति के आदेश के बारे में सूचित किया गया था। इसलिए, कार्रवाई का कारण न्यायालय के समक्ष अनुतोष प्राप्त करना था। फिर भी 31.07.1997 को एक दोहरा अभ्यावेदन दिया गया था, और 07.05.1998 को एक तर्कसंगत अस्वीकृति को फिर से सूचित किया गया था। इस बीच, प्रतिवादी को वर्ष 1997 में आयोजित डीपीसी द्वारा सेकंड-इन-कमांड के पद पर पदोन्नति के लिए विचार करने के लिए सूचीबद्ध किया गया था, और उसे 28.11.1997 को पदोन्नत किया गया था। अनुतोष के लिए न्यायालय में जाने के लिए प्रतिवादी को फिर से कार्रवाई का कारण प्राप्त हुआ लेकिन उसने 30.06.1998 को फिर से प्रतिनिधित्व किया, इसके बाद 14.09.1998, 22.08.2000, 22.08.2006 को आगे अभ्यावेदन दिए। अस्वीकृति का एक नया तर्कसंगत आदेश 16-05-2007 को पुन सूचित किया गया था। इसके बाद 28.08.2012, 07.11.2015 और 20.11.2015 को दोहराए गए अभ्यावेदनों के बाद रिट याचिका योजित की गई।

8. इसी तरह, प्रतिवादी गुलशन कुमार शर्मा को डीपीसी द्वारा वर्ष 2000-2001 और 2001-2002 में कमांडेंट के रूप में पदोन्नति के लिए विचार किया गया था, लेकिन बेंचमार्क हासिल करने में विफल रहने के कारण उन्हें हटा दिया गया था। उन्होंने 25-10-2001 को प्रतिनिधित्व किया और 09-01-2002 को सूचित किया गया कि वह बेंचमार्क हासिल करने में विफल रहे हैं। राहत प्रदान करने के लिए न्यायालय से संपर्क करने की कार्रवाई का कारण प्रतिवादी को प्राप्त हुआ था लेकिन उसने 18.03.2002 को फिर से प्रतिनिधित्व किया। दिनांक 01-09-2004 को उन्हें कारणों सहित अस्वीकृति का आदेश पुनः सूचित किया गया। 16.06.2003 को कमांडेंट के रूप में पदोन्नत होने के बाद, न्यायालय का रुख करने के बजाय, उन्होंने 04.05.2005 को फिर से प्रतिनिधित्व किया, इसके बाद 08.01.2007 को एक और अभ्यावेदन दिया। अस्वीकृति का तर्कसंगत आदेश उन्हें 17-04-2008 को पुनः सूचित किया

गया। इसके बाद 11.08.2009 को एक और अभ्यावेदन दिया गया जिसे 02.09.2009 को फिर से निरस्त कर दिया गया और कथित तौर पर 01.01.2016 को सूचित किया गया। दिनांक 03.08.2015 के एक और अभ्यावेदन को भी 27.11.2015 को निरस्त कर दिया गया था। इसके बाद रिट याचिका योजित की गई।

9. स्पष्ट रूप से, कार्रवाई का कारण पहली बार उत्तरदाताओं को प्रारंभिक निवर्तन की तिथि पर और फिर उस तिथि को उठा जब उनके प्रतिनिधित्व की अस्वीकृति के बारे में उन्हें सूचित किया गया था, या उसके बाद उचित समय के भीतर। यहां तक कि अगर ***दैव दत्त*** (उक्त) पर आधारित याचिका पर विचार किया जाता है, तो उस पर आधारित कार्रवाई का कारण 12.05.2008 को प्राप्त हुआ। कार्रवाई और कार्रवाई के कारण के समर्थन में सामग्री के रूप में क्या माना जाता है, के बीच अंतर होना चाहिए। सेवा मामलों में, विशेष रूप से पदोन्नति के संबंध में, हमेशा एक तात्कालिकता होती है। पीड़ित को जल्द से जल्द या उसके बाद उचित समय के भीतर न्यायालय से संपर्क करना चाहिए क्योंकि इस बीच तीसरे पक्ष के अधिकार उन लोगों को प्राप्त होते हैं जिन्हें बाद में पदोन्नत किया जाता है। ऐसे व्यक्ति पदोन्नति पद पर काम करना जारी रखते हैं, वरिष्ठता के संबंध में सेवा में उन्हें उपलब्ध सुरक्षा के अपने विश्वास में डूबे हुए हैं। इसके साथ किसी भी देर से हस्तक्षेप से उन लोगों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना तय है जिन्हें पहले से ही पदोन्नत किया गया है और सेवा में उनका मनोबल भी प्रभावित होता है। इसके अतिरिक्त, काफी समय बाद पूर्वव्यापी प्रभाव से पदोन्नति के लिए दूसरों पर विचार करने के लिए देर से दिए गए किसी भी निर्देश का सरकार पर वित्तीय बोझ के अलावा गंभीर प्रशासनिक प्रभाव पड़ना तय है, जो पदोन्नति के ऐसे आदेशों का पालन करेगा।

10. जहां तक ***पीएस सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य***, (1975) 1 एससीसी 152 में 14 साल की देरी से पदोन्नति के दावे पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने कहा था कि पदोन्नति से इनकार के विरुद्ध न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए छह महीने या अधिकतम एक वर्ष की अवधि उचित होगी और यह उन व्यक्तियों द्वारा ऐसे दावों पर विचार न करने के लिए विवेक का एक ठोस और बुद्धिमान प्रयोग होगा। निस्तारित मामलों को सुलझाने की कोशिश, जो केवल न्यायालय के काम को रोकते हैं और वास्तविक शिकायतों पर समय के भीतर विचार करने में बाधा डालते हैं: -

> पीठ ने कहा, "एक कनिष्ठ को पदोन्नति देने के आदेश से व्यथित व्यक्ति को कम से कम छह महीने के भीतर या इस तरह की पदोन्नति के अधिक से अधिक एक साल के भीतर न्यायालय का दरवाजा खटखटाना चाहिए। ऐसा नहीं है कि अनुच्छेद 226 के अंतर्गत न्यायालयों के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग करने के लिए कोई सीमा अवधि है और न ही ऐसा कोई मामला नहीं हो सकता है जहां न्यायालय एक निश्चित अवधि बीतने के बाद किसी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं। लेकिन न्यायालयों के लिए यह विवेकाधिकार का एक ठोस और बुद्धिमान प्रयोग होगा कि वे उन व्यक्तियों के मामले में अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी असाधारण शक्तियों का उपयोग करने से इनकार कर दें जो राहत के लिए तेजी से उससे संपर्क नहीं करते हैं और जो खड़े रहते हैं और चीजों को होने देते हैं और फिर बासी दावों को सामने रखने और निस्तारित मामलों

को सुलझाने की कोशिश करने के लिए न्यायालय का दरवाजा खटखटाते हैं। इसलिए याचिकाकर्ता की याचिका को निरस्त कर दिया जाना चाहिए था। ऐसी याचिकाओं पर विचार करना न्यायालय के समय की बर्बादी है। यह न्यायालय के काम को रोकता है और वैध शिकायतों के साथ-साथ इसके सामान्य काम पर विचार करने में न्यायालय के काम को बाधित करता है। हम मानते हैं कि उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता की याचिका के साथ-साथ अपील को निरस्त करके सही किया।"

11. ***गांधीनगर मोटर ट्रांसपोर्ट सोसाइटी बनाम बॉम्बे राज्य***, ए.आई.आर. 1954 बॉम्बे 202 के मामले में अनुतोष प्रदान करने के लिए न्यायालय से संपर्क करने में देरी के लिए केवल बार-बार अभ्यावेदन दाखिल करना पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं हो सकता है।, मुख्य न्यायाधीश छागला द्वारा, टिप्पणी निम्नानुसार है: -

"(2)..... अब, हमें यह बताने का अवसर मिला है कि यह न्यायालय याचिका प्रस्तुत करने में केवल देरी का बहाना करेगा जो याचिकाकर्ता द्वारा उसे दिए गए कानूनी उपाय को आगे बढ़ाने के कारण होता है। इस विशेष मामले में याचिकाकर्ता ने वैधानिक उपायों का अनुसरण नहीं किया। उन्होंने जो उपाय किया वह गैर-कानूनी या न्यायेतर था। एक बार सरकार का अंतिम निर्णय दिए जाने के बाद, एक अभ्यावेदन केवल दया या भोग के लिए अपील है, लेकिन यह उस उपाय को आगे नहीं बढ़ा रहा है जो विधि ने याचिकाकर्ता को दिया है।"

12. अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपने प्रति-शपथपत्र में विशेष रूप से आपत्ति जताई थी कि दावा बहुत देर से किया गया था, और पूर्वव्यापी विचार के लिए कोई भी निर्देश स्थापित स्थिति को अस्थिर करने में एक अस्थिर प्रभाव डालेगा, जिससे अन्य प्रशासनिक परिणामों के अलावा पूरी तरह से अराजकता पैदा होगी। उच्च न्यायालय आपत्ति पर विचार करने में विफल रहा। ***भारत संघ बनाम एमके सरकार*** (2010) 2 एससीसी 59, के मामले में इस न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की: -

"16. एक न्यायालय या न्यायाधिकरण, किसी दावे या अभ्यावेदन पर 'विचार' का निर्देश देने से पहले, यह जांचना चाहिए कि क्या दावा या अभ्यावेदन 'जीवित' मुद्दे के संदर्भ में है या क्या यह 'मृत' या 'बासी' मुद्दे के संदर्भ में है। यदि यह किसी 'मृत' या 'बासी' मुद्दे या विवाद के संदर्भ में है, तो न्यायालय / ट्रिब्यूनल को मामले को समाप्त कर देना चाहिए और विचार या पुनर्विचार का निर्देश नहीं देना चाहिए...

13. ***देवदत्त*** (उक्त) मामले में डीपीसी 16.12.1994 को हुई थी। इसमें अपीलकर्ता ने अपने निवर्तन से व्यथित होकर 21-08-2001 को एकल न्यायाधीश द्वारा और 26-11-2001 को खण्डपीठ द्वारा निर्णय सुनाए जाने के लिए उच्च न्यायालय का रुख किया। वर्ष 2002 में इस न्यायालय के समक्ष अपील योजित की गई थी। यदि यह उत्तरदाताओं के मामले को अलग करने के लिए पर्याप्त नहीं था, तो पैराग्राफ 36 में टिप्पणियों का संदर्भ निम्नानुसार भी दिया जा सकता है:

"36. वर्तमान मामले में, हम यह मानते हुए प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को विकसित कर रहे हैं कि सार्वजनिक प्रशासन में निष्पक्षता और पारदर्शिता के लिए आवश्यक है कि लोक सेवक की वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट में सभी प्रविष्टियां (चाहे खराब, निष्पक्ष, औसत, अच्छी या बहुत अच्छी), चाहे वह सिविल, न्यायिक, पुलिस या किसी अन्य राज्य सेवा (सेना को छोड़कर) में हो। उन्हें एक उचित अवधि के भीतर सूचित किया जाना चाहिए ताकि वह इसके उन्नयन के लिए एक अभ्यावेदन दे सकें।

14. उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों की तथ्य स्थिति पर ध्यान दिए बिना ***देव दत्त*** (उक्त) और ***सुखदेव*** (उक्त) पर पूर्ण भरोसा करके गलती की। ***भारत संघ और एक अन्य बनाम मेजर बहादुर सिंह,*** (2006) (1) एससीसी 368 में, यह देखा गया था: -

"9. न्यायालयों को इस बात पर चर्चा किए बिना निर्णयों पर भरोसा नहीं करना चाहिए कि तथ्यात्मक स्थिति उस निर्णय की तथ्य स्थिति के साथ कैसे फिट बैठती है जिस पर भरोसा किया गया है। न्यायालयों की टिप्पणियों को न तो यूक्लिड के प्रमेयों के रूप में पढ़ा जाना चाहिए और न ही क़ानून के प्रावधानों के रूप में और उसे भी उनके संदर्भ से बाहर निकाला जाना चाहिए। इन टिप्पणियों को उस संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए जिसमें वे बताए गए प्रतीत होते हैं। न्यायालयों के निर्णयों को विधियों के रूप में नहीं माना जाना चाहिए। किसी क़ानून के शब्दों, वाक्यांशों और प्रावधानों की व्याख्या करने के लिए, न्यायाधीशों के लिए लंबी चर्चा शुरू करना आवश्यक हो सकता है, लेकिन चर्चा समझाने के लिए होती है न कि परिभाषित करने के लिए। न्यायाधीश विधियों की व्याख्या करते हैं, वे निर्णयों की व्याख्या नहीं करते हैं। ..."

15. इस न्यायालय द्वारा बाद में दिया गया फैसला नए जीवन को उत्साहित नहीं कर सकता है, या उस दावे के लिए कार्रवाई का एक नया कारण प्रस्तुत नहीं कर सकता है जो अन्यथा स्पष्ट रूप से एक मृत और बासी दावा था। ***उत्तरांचल राज्य बनाम शिव चरण सिंह भंडारी,*** (2013) 12 एससीसी 179 में, यह देखा गया कि:

"29. बिना किसी कारण के, क्या यह नहीं कहा गया है कि सब कुछ रुक सकता है लेकिन समय नहीं, क्योंकि हम सभी समय के गुलाम हैं। हो सकता है कि सीमा का प्रावधान करने वाला कोई प्रावधान न हो, लेकिन पदोन्नति से संबंधित शिकायत को किसी भी समय नया जीवन नहीं दिया जा सकता है।

16. ***सी जैकब बनाम निदेशक भूविज्ञान और खनन***, (2008) 10 एससीसी 115 में चर्चा की गई स्पष्ट रूप से मृत और बासी दावों को पुनर्जीवित करने के लिए प्रतिनिधित्व सिंड्रोम की कार्यप्रणाली के संबंध में टिप्पणियां और न्यायालय द्वारा बरती जाने वाली सावधानी को भी वर्तमान मामले के तथ्यों में उचित माना जाता है।

17. वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, 17 से 20 वर्षों से अधिक समय बीतने पर प्रतिवादियों की पूर्वव्यापी पदोन्नति पर विचार करने का कोई भी निर्देश, वास्तव में सेवा में सुनामी लाएगा, जिसके परिणामस्वरूप सरकार के लिए वित्तीय निहितार्थ के अलावा

प्रशासनिक अराजकता पैदा होगी। इसलिए उच्च न्यायालय के निर्णय न्यायालय को अस्थिर मानते हुए निरस्त किया जाता है।

18. पूर्वोक्त कारणों के आधार दोनों अपीलों को स्वीकार किया जाता है

अनुवादकर्ता
मणि यज्ञेश त्रिपाठी
अधिवक्ता,
इलाहाबाद उच्च न्यायालय